भारतीय वाङ्मय

हिन्दी तथा अहिन्दीभाषी क्षेत्रों के साहित्यिक-सांस्कृतिक समाचारों की मासिक पत्रिका

वर्ष 3 | **सितम्बर** 2002 | **अंक** 9

एक भारतीय आत्मा की चुहल

'एक भारतीय आत्मा' पं० माखनलाल चतुर्वेदी अपनी चुहल के लिए भी ख्यात थे। राष्ट्रीय आन्दोलन के दिनों में उन पर गुप्तचरों की दृष्टि रहती थी। उन्हें छकाने में उन्हें बड़ा मजा आता है। अपनी जेब में पिस्तौलनुमा डिब्बा रखते थे, पुलिस उसे पिस्तौल समझ कर तलाशी लेने आती। वे उसे निकालकर खोलते और कहते इलायची खाओ। पुलिस झेंपने लगती।

एक बार 'कर्मवीर' कार्यालय में तलाशी आई, एक पुस्तक विशेष के लिए। माखनलालजी के पास वह पुस्तक थी, उन्होंने तुरन्त अपने सहयोगी से कहा—तुम अपनी मेज पर बैठकर इस पुस्तक को खोलकर पढ़ो और कुछ लिखने का नाटक करो। पुलिस ने सब जगह देखा किन्तु उस व्यक्ति पर उनकी दृष्टि नहीं पड़ी जो वह पुस्तक पढ़ रहा था। इस प्रकार पुलिस को निराश लौटना पड़ा।

माखनलालजी पत्रकार सम्मेलन में खंडवा से मेरठ गये। कुछ लोगों को यह नहीं पता था कि खंडवा कहाँ है। किसी ने कहा खंडवा लंका में है। माखनलालजी ने कहा—सीता को हर तो लेने दें तभी ढूँढ़ते हुए खंडवा आइये।

खंडवा में माखनलालजी के प्रयास से नीलकंठेश्वर कालेज की स्थापना हुइ। उस कालेज का वार्षिक अधिवेशन था। नगर के सम्भ्रान्त नागरिक, प्रशासनिक अधिकारी सभी एकत्र हुए। माखनलालजी अध्यक्ष पद से बोलने खड़े हुए। उन्होंने कहा—जिस नगर का कलक्टर सेठ हो और पुलिस अधीक्षक दलाल हो उस नगर का भगवान मालिक। सारा हाल हँसी से गूँज उठा। कलक्टर की टाईटिल सेठ थी और पुलिस अधीक्षक की दलाल।

चुहल की ऐसी कितनी घटनाएँ जो माखनलालजी और उनके सहयोगियों से सुनी और स्वयं देखी उनकी चर्चा फिर कभी।

— पुरुषोत्तमदास मोदी

चौथे आलोचक का राजर्षि अभिषेक

पिछले दिनों काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में पुनश्चर्या पाठ्यक्रम के अन्तर्गत नामवरजी ने कहा था—बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय हिन्दी साहित्य के लिए 'कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय' के समान है, क्योंकि यहाँ से तीन आलोचक पैदा हुए। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी तथा आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी। **यहाँ पैदा होने वाला चौथा आलोचक कौन ?**

चौथे आलोचक का मुहूर्त आखिर आ गया। नामवर के निमित्त पचहत्तरवें वर्ष पूर्ण करने पर काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में इस समारोह का शुभारम्भ होना था, किन्तु ग्रहदोष ने इस बार भी नामवरजी को कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय में यह गौरव प्रदान करने से वंचित कर दिया।

आयोजकों को अन्ततः उदय प्रताप कालेज की शरण लेनी पड़ी और रविवार 28 जुलाई को राजर्षि सभागार में विशाल समारोह का आयोजन हुआ। इस समारोह में दिल्ली से सर्वश्री प्रभाष जोशी, केदारनाथ सिंह, मध्यप्रदेश से कमलाप्रसाद, राजेश जोशी, इलाहाबाद से दूधनाथ सिंह, रवीन्द्र कालिया, सत्यप्रकाश मिश्र, पटना से नंदकिशोर नवल, खगेन्द्र ठाकुर, कलकत्ता से अरविन्द चतुर्वेदी, कृपाशंकर चौबे, हरिद्वार से त्रिलोचनजी, गोरखपुर से परमानन्द श्रीवास्तव तथा स्थानीय अनेक साहित्यकार, अध्यापक, नागरिक, वकील सभी सम्मिलित हुए जिनमें श्री चन्द्रबली सिंह प्रमुख थे।

प्रयाग से रविन्द्र कालिया और दूधनाथ सिंह श्रावण मास में काँवरियों के साथ बोलबम कहते हुए त्रिवेणी का जल लेकर अभिषेक हेतु आये। माँ विन्ध्यवासिनी के नगर मीरजापुर के चौधरी बदरीनारायण 'प्रेमघन' मार्ग से भवदेव पाण्डेय अपनी मण्डली के साथ विन्ध्यवासिनी चालीसा के तर्ज पर नामवर चालीसा पढ़ते हुए आये।

'काशी की सांस्कृतिक परम्परा और आज का सांस्कृतिक संकट' विषय पर भीषण भाषण हुए। खासकर ऐसे लोगों के जिन्हें काशी की शाश्वत संस्कृति का बोध नहीं।

डॉ० नामवर सिंह ने कहा—काशी को हिन्दुत्व तक सीमित परिधि से न तो बाँधा जा सकता है, न ही इसकी समग्रता को जाति या मजहब के नाम पर खण्डित किया जा सकता है। यह तो सरस सलिल एक प्रवहमान संस्कृति की मूल छाया है जहाँ आकर गंगा और यमुना का संगम पूर्ण होकर एक वास्तविक और सम्पूर्ण स्वरूप प्राप्त करता है।

तीसरे सत्र में माल्यार्पण का क्रम तब तक चला जब तक मालाएँ अपने सुमेरू तक नहीं पहुँच गईं। माल्यार्पण के बाद उपहार प्रदान की बारी आई। चित्रकार ने नामवरजी की विशाल चित्र, मूर्तिकार ने मूर्ति, लेखक ने पुस्तक, सम्पादक ने पत्रिका किसी ने अभिनन्दन पत्र और किसी ने अंगवस्त्र प्रदान कर अभिनन्दन की रस्म पूरी की। नामवर के निमित्त के सूत्रधार वरिष्ठ पत्रकार प्रभाष जोशी ने कहा—आज हम चतुर्दिक संकट में हैं। संकट का शिंकजा दिन ब दिन कसता जा रहा है। प्रतिरोध के बड़े आन्दोलन के द्वारा ही इस शिकंजे को तोड़-मरोड़ कर फेंका जा सकता हे। इसकी बागडोर थामने के लिए इस समय नामवर सिंह के अलावा कोई दूसरा व्यक्तित्व उन्हें दिखाई नहीं पड़ रहा है। उन्होंने आगे कहा—हिन्दी भाषाभाषी क्षेत्रों की दयनीयता को देखते हुए इस भाषा के पुनर्जागरण के आन्दोलन का निमित्त बनने के लिए मैं नामवर का आह्वान करता हूँ। त्रिलोचन शास्त्री ने कहा—नामवरजी की विलक्षण बौद्धिक शक्ति और प्रभावशाली वक्तृता शैली दोनों एक जगह कम मिलती है। नामवर सिंह में दोनों है। अन्त में नामवर सिंह ने कहा कि—यदि मेरे बलिदान में आप सबका कल्याण निहित है तो मैं बलि होने के लिए तैयार हूँ।

बकौल केदारनाथ सिंह नामवर के निमित्त का पहला आयोजन दिल्ली के राजेन्द्र सदन में हुआ था, समापन राजर्षि द्वारा स्थापित उदय प्रताप कालेज के राजर्षि सभागार में हो रहा है। इस प्रकार गंगा तट से दूर वरुणा के निकट प्रभावशाली वक्तृता सम्पन्न चौथे आलोचक का राजर्षि अभिषेक सम्पन्न हुआ।

—पुरुषोत्तमदास मोदी

स्मृति-शेष

युग तुलसी ब्रह्मलीन

श्रावण शुक्ल सप्तमी तुलसी तज्यो शरीर

युग तुलसी मानस मर्मज्ञ **पं० रामकिंकर उपाध्याय** तुलसीदास की परम्परा में श्रावण शुक्ल के प्रथम दिवस शुक्रवार 9 अगस्त 2002 को अयोध्या में अपने निवास 'रामायणम्' में ब्रह्मलीन हो गये।

हनुमानजी की कृपा से 1 नवम्बर 1924 को जबलपुर में गोधूलि बेला में सायं 4.45 पर पं० शिवनायक उपाध्याय के परिवार में आपका जन्म हुआ। कहते हैं रामकिंकरजी में स्वयं हनुमानजी का वास था। रामकिंकरजी जब दस वर्ष के थे उनके पिता विलासपुर कथा करने गये। वहाँ वे अस्वस्थ हो गये। भक्तों ने बालक रामकिंकर से कहा आप ही कथा सुनायें, आप उपाध्यायजी के पुत्र हैं। रामकिंकर ने अपनी असमर्थता व्यक्त की और अनमने मन से एक पेड़ के नीचे बैठ गये। उन्हें नींद आ गई। नींद में स्वयं हनुमानजी ने उनका तिलक किया और कहा जाओ रामकथा कहो। बालक रामकिंकर ने ऐसी कथा कही कि चहुँ ओर उनकी ख्याति हो गई। 10 वर्षीय रामकिंकर की विलासपुर में शुरू हुई भक्तिमय कथा-यात्रा रामजन्मभूमि अयोध्या में समाप्त हुई। काशी रामकिंकरजी की कर्मस्थली रही। श्री बसंतकुमार बिरला तथा श्रीमती सरला बिरला परिवार आपकी परमभक्त है। बिरला संस्थानों द्वारा अनेक केन्द्रों पर रामकिंकरजी की कथा का आयोजन होता रहा है। बिरला अकादेमी ऑफ आर्ट एण्ड कल्चर, कलकत्ता ने रामकिंकरजी के कथा प्रवचन अनेक भागों में प्रकाशित किये हैं। जिनमें प्रमुख हैं—मानस प्रवचल (23 भाग), मानस मुक्तावली (4 भाग), मानस चरितावली (2 भाग)। इनके अतिरिक्त रामायणम् (ट्रस्ट), अयोध्या से मानस चिन्तन (3 भाग), मानस मंथन (5 भाग), मानस दर्पण (4 भाग) आदि लगभग 65 पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं।

रामकिंकरजी की कथा में भक्ति तथा ज्ञान का मणिकांचन योग रहता था। वे जब कथा कहते थे तो कोई ध्वनि नहीं होती थी, पूर्ण शान्ति विराजती थी। श्रोता मंत्रमुग्ध होकर कथा सुनते थे। वे साक्षात् हनुमान के स्वरूप थे। लगता था हनुमानजी स्वयं बोल रहे हैं।

शताब्दियों में प्रभुवाणी के ऐसे उद्घोषक जन्म लेते हैं। डोंगरेजी महाराज, स्वामी अखण्डानन्दजी की परम्परा के ऐसे प्रवचनकर्ता थे जिनकी पूर्ति नहीं हो सकती। युग तुलसी के चरणों में नमन्।

'भारतीय वाङमय' केवल किसी प्रकाशन हाउस की प्रचार पत्रिका नहीं है, बल्कि यह लेखन प्रकाशन जगत की घटनाओं का संशेष समेटे हुए है। **—दयानंद वर्मा,** दिल्ली

प्रमुख इतिहास ग्रन्थ

Ancient Indian Administration & Penology *Paripurnanand Varma* 300.00
Textiles in Ancient India *Dr. Kiran Singh* 200.00
Prinsep's Benares Illustrated *James Prinsep* *Int. by Dr. O.P. Kejariwal* 800.00
Hinduism and Buddhism *Dr. Asha Kumari* 200.00
Life in Ancient India *Dr. Mahendra Pratap Singh* 100.00
The Imperial Guptas Vol. I-II *Dr. P.L. Gupta* Each 200.00
प्राचीन भारतीय शासन-पद्धति *प्रो० अनंत सदाशिव अलतेकर* 250.00
प्राचीन भारतीय राजनीतिक विचारधारा *डॉ० लल्लनजी गोपाल* 150.00
प्राचीन भारतीय कला में मांगलिक प्रतीक *डॉ० विमलमोहिनी श्रीवास्तव* 200.00
प्रागैतिहासिक मानव और संस्कृतियाँ *डॉ० श्रीराम गोयल* 50.00
विश्व की प्राचीन सभ्यताएँ '' 250.00
प्राचीन भारतीय समाज और चिन्तन *डॉ० चन्द्रदेव सिंह* 150.00
ग्रीक-भारतीय (अथवा यवन) *प्रो० ए०के० नारायण* 300.00
प्राचीन भारत *डॉ० राजबली पाण्डेय* 300.00
प्राचीन भारत के प्रमुख अभिलेख (खण्ड-1 मौर्य-काल से कुषाण (गुप्त-पूर्व) काल तक) *डॉ० परमेश्वरीलाल गुप्त* 150.00
प्राचीन भारत के प्रमुख अभिलेख (खण्ड-2 गुप्त-काल 319-543 ई.) *डॉ० परमेश्वरीलाल गुप्त* 120.00
गुप्त साम्राज्य *डॉ० परमेश्वरीलाल गुप्त* 350.00
भारतीय वास्तुकला *डॉ० परमेश्वरीलाल गुप्त* 150.00
भारत के पूर्व-कालिक सिक्के '' 275.00
प्राचीन भारतीय मुद्राएँ '' 60.00
गुप्तोत्तरकालीन उत्तर भारतीय मुद्राएँ (600 से 1200 ई.) *डॉ० ओंकारनाथ सिंह* 100.00
प्राचीन भारतीय कला एवं वास्तु *डॉ० पृथ्वीकुमार अग्रवाल* 400.00
गुप्तकालीन कला एवं वास्तु '' 200.00
प्राचीन भारतीय प्रतिमा-विज्ञान एवं मूर्ति-कला *डॉ० ब्रजभूषण श्रीवास्तव* 200.00
शुंगकालीन भारत *सच्चिदानन्द त्रिपाठी* 50.00
चालुक्य और उनकी शासन-व्यवस्था *डॉ० रेणुका कुमारी* 60.00
बुद्ध और बोधिवृक्ष *डॉ० शीला सिंह* 150.00
कम्बुज देश का राजनैतिक और सांस्कृतिक इतिहास *डॉ० महेशकुमार शरण* 175.00
मध्यकालीन भारतीय मूर्तिकला *डॉ० मारुतिनन्दन तिवारी* 150.00
इतिहास दर्शन *डॉ० झारखण्ड चौबे* 300.00
मध्यकालीन भारतीय प्रतिमालक्षण (7वीं शती से 13वीं शती) *डॉ० मारुतिनन्दन तिवारी एवं डॉ० कमल गिरि* 325.00
भारतीय संग्रहालय एवं जनसम्पर्क *डॉ० आर० गणेशन्* 400.00
भारतीय संस्कृति की रूपरेखा *डॉ० पृथ्वीकुमार अग्रवाल* 250.00
काशी का इतिहास *डॉ० मोतीचन्द्र* (यंत्रस्थ)
काशी की पाण्डित्य परम्परा *पं० बलदेव उपाध्याय* 600.00
काशी के घाट : कलात्मक एवं सांस्कृतिक अध्ययन *डॉ० हरिशंकर* 300.00
दक्षिण-पूर्व एशिया *डॉ० शैलेन्द्रप्रसाद पांथरी* 30.00
महाभारत का काल निर्णय (ज्योतिर्वैज्ञानिक साक्ष्य के आधार पर) *डॉ० मोहन गुप्त* 200.00
प्राचीन भारत के आधुनिक इतिहासकार *डॉ० हीरालाल गुप्त* 30.00
क्षत्रियों की उत्पत्ति एवं विकास *डॉ० सरोज रानी* 200.00

प्राचीन भारतीय कला में मांगलिक प्रतीक

डॉ० विमलमोहिनी श्रीवास्तव

200.00

कला और साहित्य दोनों ही जीवन से अभिन्न रूप से जुड़े हुए हैं। साहित्य को समाज का दर्पण कहा जाता है तथा कला भी समाज को प्रतिबिम्बित करती है। कला संस्कृति की यथार्थ की प्रस्तुति ही नहीं वरन् यह संस्कृति के आदर्शों की सबसे प्रबल और सजीव अभिव्यक्ति भी है। संस्कृति के मूल तत्त्वों को कला और साहित्य दोनों ही हृदयस्पर्शी रूप में व्यक्त करते हैं। साथ ही दोनों कुछ बिम्बों और प्रतीकों का सहारा लेते हैं। साहित्य की तुलना में कला में इन बिम्बों, प्रतीकों की भूमिका अधिक प्रभावोत्पादक है। भारतीय कला की विशेषता उसके बिम्ब व प्रतीक ही हैं, इसकी परम्परा और संस्कृति की सही पहचान के लिये इनका अध्ययन आवश्यक है। भारतीय कला के विदेशी अध्येताओं ने कला का सतही विश्लेषण करके अपने कार्य की इतिश्री मान ली। यही कारण है कि वे भारतीय कला के साथ न्याय नहीं कर सके।

भारत में इस प्रकार के अध्ययन का श्रीगणेश कुमार स्वामी, डॉ० वासुदेवशरण अग्रवाल के नामों से जुड़ा है। डॉ० विमलमोहिनी ने गहन अध्ययन और मनन के द्वारा अपने शोध प्रबन्ध 'प्राचीन भारतीय कला के कतिपय मांगलिक प्रतीक' को सम्पादित किया है। यह इस विषय पर पहली क्रमबद्ध विश्लेषणात्मक प्रस्तुति मानी गई है।

— हरिवंशराय बच्चन

पुरस्कार-सम्मान

स्वतंत्रता दिवस पर राष्ट्रपति ए०पी०जे० अब्दुल कलाम ने विभिन्न भाषाओं के निम्नांकित विद्वानों को सम्मानित किया—

संस्कृत—प्रोफेसर एस०बी रघुनाथाचार्य, प्रोफेसर काशीनाथ मिश्र, डॉ० के०पी०ए० मेनन, डॉ० श्रीकृष्ण सेमवाल, डॉ० श्रीमती उषा सत्यव्रत, पंडित मूलराज शास्त्री, के०एस० वरदाचार्य, एन०टी० श्रीनिवास आयंगर, डॉ० श्रीपदशास्त्री ढुंढीराज कवीश्वर, डॉ० अनामचरण स्वेन, डॉ० प्रभाकर शास्त्री, प्रोफेसर एन० वीझिनाथन, एस० कृष्णमूर्ति गणपतिगल, डॉ० पारसनाथ द्विवेदी और डॉ० नलिनीकांत मिश्र।

पाली—प्रोफेसर सत्यरंजन बनर्जी

अरबी—नजरूल हफीज नदवी, सैयद अहसानुर रहमान और प्रोफेसर एफ०के० अहमद कुट्टी।

फारसी—प्रोफेसर एस०आई० हवेवाला, मोहम्मद जुबैर कुरैशी और डॉ० अब्दुल कादिर जाफरी।

इनके अलावा राष्ट्रपति ने संस्कृत, पाली अथवा प्राकृत, अरबी और फारसी के निम्नलिखित विद्वानों को महर्षि मद्रायण व्यास सम्मान प्रदान किया गया।

संस्कृत—के० शंकरनारायण अदिगा, एन० आर० शताकोपा ताताचारियार, डॉ० जनार्दनप्रसाद पाण्डेय, डॉ० उपेन्द्र पाण्डेय और डॉ० राजाराम शुक्ल

प्राकृत—डॉ० सुदीप जैन

अरबी—डॉ० अब्दुल मजीद काजी

फारसी—डॉ० मोहम्मद एजाद अहमद

ये सम्मान संस्कृत, पाली अथवा प्राकृत, अरबी और फारसी के क्षेत्र में प्रत्येक वर्ष विशिष्ट योगदान के लिए दिये जाते हैं।

आर० चेतन क्रांति सम्मानित

वर्ष 2002 का भारतभूषण अग्रवाल स्मृति पुरस्कार वर्ष की सर्वश्रेष्ठ मानी गई कविता 'सीलमपुर की लड़कियाँ' के लिये युवा कवि **आर० चेतन क्रांति** को दिया गया है। पुरस्कार समति के निर्णायक मंडल के सदस्य विष्णु खरे के अनुसार चेतन क्रांति की कवितायें उनके सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक सरोकारों को दर्शाती हैं।

डॉ० द्विवेदी 'समाजरत्न' से सम्मानित

संस्कृत के मूर्धन्य विद्वान् पद्मश्री **डॉ० कपिलदेव द्विवेदी** को संस्कृत साहित्य में विशिष्ट योगदान के लिए इस वर्ष का 'समाज रत्न' अलंकरण प्रदान किया गया है। वरिष्ठ नागरिक मंच भोपाल द्वारा रविन्द्र भवन, भोपाल में आयोजित इस समारोह में डॉ० द्विवेदी को मध्य प्रदेश के राज्यपाल महामहिम डॉ० भाई महावीरजी ने 'समाज रत्न' से अलंकृत किया। 83 वर्षीय स्वतंत्रता संग्राम सेनानी डॉ० द्विवेदी के अब तक 70 से अधिक उच्चस्तरीय ग्रन्थ वेद, संस्कृत साहित्य, संस्कृत व्याकरण प्रकाशित हो चुके हैं। संस्कृत साहित्य में विशिष्ट योगदान के लिए 1991 में भारत सरकार द्वारा 'पद्मश्री' से अलंकृत किया जा चुका है।

ऋतु कमल के उपन्यास को अंतर्राष्ट्रीय पुरस्कार

नोट्रेडेम एकेडमी, पटना में पढ़ने वाली पटना की इण्टर की छात्रा **ऋतु कमल** के लिखे अंग्रेजी उपन्यास 'पंचकन्या' को इण्टरनेशनल डब्लिन लिटरेसी एवार्ड-2003 के लिए चुना गया है। एक लाख यूरो (सत्तर लाख रुपये) का यह अंतर्राष्ट्रीय पुरस्कार पाने वाली ऋतु कमल पहली भारतीय लेखिका है। भारतीय विद्या भवन से प्रकाशित पाँच सौ पृष्ठों के इस उपन्यास को ऋतु कमल ने महज सोलह वर्ष की उम्र में पूरा किया। 'पंचकन्या' उपन्यास की कथा भारतीय दर्शन पर आधारित है।

शास्त्री स्मारक सम्मान

सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय के कुलपति **प्रो० राजेन्द्र मिश्र** को श्री वेद भारती ट्रस्ट (हैदराबाद) ने प्राच्यविद्या के उन्नयन व संस्कृत में विशिष्ट मौलिक काव्य रचना के लिए इस वर्ष 'राष्ट्र कवि अच्युतानन्द शास्त्री स्मारक सम्मान' हैदराबाद में आयोजित समारोह में प्रदान किया। ज्ञातव्य है कि अब तक प्रो० मिश्र की 22 पुस्तकें व 120 से अधिक शोधपत्र प्रकाशित हो चुके हैं। उनकी जो पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं, उसमें जीवनम् महाकाव्य, वामनावतारम् महाकाव्य, अभिराज सप्तशती खण्डकाव्य, नाटक व कहानी संग्रह आदि हैं। हिन्दी में उनकी 18 पुस्तकें प्रकाशित हैं। उल्लेखनीय है कि संस्कृत व हिन्दी में विशिष्ट लेखन के लिए उन्हें देश व विदेश की अनेक संस्थाओं द्वारा सम्मानित किया जा चुका है। उत्तर प्रदेश राज्य साहित्यिक पुरस्कार से उन्हें दस बार सम्मानित किया गया है।

श्री अमरनाथ शुक्ल सम्मानित

विक्रमशिला हिन्दी विद्यापीठ, गाँधीनगर भागलपुर के सारस्वत सम्मान समारोह में **श्री अमरनाथ शुक्ल** को उनकी सुदीर्घ हिन्दी सेवा, सारस्वत साधना, सांस्कृतिक क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण योगदान एवं उपलब्धियों के लिए 'विद्यावाचस्पति' की उपाधि से अधिकृत कर सम्मानित किया गया।

'भारतीय वाङ्मय' (अगस्त 2002) की प्रति मिली। आपने 'हिन्दी के शोध ग्रन्थों' को लेकर महत्त्वपूर्ण टिप्पणी की है। सचमुच सन्दर्भ ग्रन्थों पर योजनाबद्ध कार्य होना चाहिए।

'हिन्दी साहित्य कोश' दो भागों में है किन्तु पुराना हो जाने के कारण वह अपूर्ण मालूम होने लगा है। आप ऐसी कोई योजना हाथ में लीजिए। मेरा तथा अन्य मित्रों का सहयोग आपको मिलेगा। आज के प्रोफेसर प्राय: लगन और निष्ठा से किसी काम को करना नहीं चाहते। —**जयप्रकाश भारती**

सम्पादक, नंदन, नई दिल्ली

विभक्ति विचार

हिन्दी जगत में लगभग 120 वर्षों से यह विवाद अनिर्णीत चला आ रहा है कि हिन्दी में विभक्ति मूल शब्द से सटा कर लिखी जाय या हटा कर। बीसवीं शताब्दी (ईसवीय) के आरम्भिक काल में समाचार-पत्रों में इस विवाद पर उभय पक्ष से लेख प्रकाशित हुए किन्तु कोई सिद्धान्त नहीं स्थिर हुआ। सन् 1921 ई० में पं० कामताप्रसाद गुरू ने 'हिन्दी व्याकरण' में इस विवाद का उल्लेख किया और विभक्ति अलग लिखने के पक्ष में अपना रुझान भी प्रकट किया किन्तु विवाद को यह कहकर अनिर्णीत छोड़ दिया कि वैयाकरण को भाषा के प्रयोग के सम्बन्ध में अधिकार नहीं है। सन् 1952 ई० में बाबू रामचन्द्र वर्म्मा ने 'अच्छी हिन्दी' में उस दीर्घ-कालिक कटु विवाद का हवाला देते हुए कहा कि भाषा का स्वरूप स्थिर करने के लिए एक सिद्धान्त स्थिर होना चाहिए क्योंकि सदा के लिए इस विषय में दो पक्ष बने रहना वांछनीय नहीं है। किन्तु उन्होंने स्वयं उस दिशा में कोई पहल नहीं की।

आज भी यह विवाद अनिर्णीत है। जहाँ अधिकांश संस्थाएँ, प्रेस, विद्वत्जन और जनसाधारण विभक्ति हटा कर लिखते हैं, वहीं ज्ञानमण्डल (दैनिक 'आज' सहित), गीताप्रेस, विक्रम परिषद् जैसी संस्थाएँ तथा उनके प्रभाव क्षेत्र में आने वाले बहुसंख्यक लोग विभक्ति को प्रकृति से सटाकर लिखते हैं।

श्रीनारायणदास ने अपनी शीघ्र प्रकाश्य पुस्तक **हिन्दी में विभक्ति प्रयोग** में गम्भीर अध्ययन, चिन्तन और संगत ग्रन्थों के मन्थन के उपरान्त प्रकृति से विभक्ति को पृथक लिखे जाने को सही प्रमाणित किया है। ऋग्वेद के मंत्रों की शुद्धता की रक्षा के लिए शाकल्य द्वारा बनाये गये पदपाठ से उद्धरण देकर यह प्रमाणित किया है कि स्वराद्य विभक्तियाँ तो सन्धि के कारण संश्लिष्ट होती हैं किन्तु व्यंजनाद्य विभक्तियाँ मूल शब्द से सर्वथा विलग रखी जाती हैं—यहाँ तक कि पार्थक्य सुस्पष्ट करने के लिए बीच में अवग्रह का प्रयोग भी किया गया है (जैसे ऋषिऽभि:)। उन्होंने 'अपदं न प्रयुञ्जीत' तथा 'सुप्तिङन्तं पदम्' की तर्कसम्मत व्याख्या की है और पतञ्जलि के महाभाष्य से ही यह दिखलाया है कि जहाँ व्यंजनाद्य विभक्ति बाद में आए वहाँ मूल शब्द को ही 'पद' की संज्ञा प्राप्त हो जाती है। वहाँ पद बनाने के लिए मूल शब्द के अन्त में विभक्ति सटाने की आवश्यकता नहीं होती। छन्दशास्त्र के नियमों तथा अन्य शास्त्रीय प्रमाणों की सहायता से भी यह अन्तिम रूप से सिद्ध होता है कि हिन्दी में विभक्ति को प्रकृति से विलग लिखना ही व्याकरण सम्मत है।

आशा है इस युगान्तरकारी ग्रन्थ के प्रकाशन से शताधिक वर्षों से चला आ रहा यह विवाद समाप्त हो जायगा।

समाचार

विकास प्राधिकरण, वाराणसी प्रेमचंद की जन्मस्थली लमही को भव्य रूप देने के लिए करीब पचास लाख रुपये की लागत वाला प्रस्ताव तैयार कर रहा है। कोशिश यह की जा रही है कि वहाँ का हेरिटेज स्वरूप बरकार रखते हुए उसे भव्य स्मारक के रूप में बदल दिया जाए।

सचिव ने बताया कि भव्य स्मारक के लिए वहाँ के लोगों से जमीन उपलब्ध कराने का अनुरोध किया जागए।

वहाँ पहले से ही एक सरोवर मौजूद है। अगर ग्रामीण जमीन उपलब्ध कराने को राजी हो जाएंगे, तो बड़ा परिसर बनाने की योजना को अमलीजामा पहनाने में काफी सहूलियत होगी। जमीन उपलब्ध होने के बाद वहाँ एक बड़ी लाइब्रेरी, साहित्यकारों के जमावड़े व विचार-विमर्श के लिए परिसर में ही समुचित व्यवस्था की भी तैयारी है। इसके अलावा स्मारक तक पहुँचने के लिए मुख्य मार्ग से लमही तक सड़क का निर्माण व रास्ते में समुचित प्रकाश की व्यवस्था करने का प्रस्ताव भी योजना शामिल किया जाएगा।

'डॉक्टरेट' के लिए विदेशी भाषा

देश में डॉक्टरेट की डिग्री के अकादमिक महत्त्व को बरकरार रखने तथा उसे रोजगारपरक बनाने के लिए सरकार पी-एच०डी०/डी०फिल० के साथ एक विदेशी भाषा के प्रशिक्षण को अनिवार्य करने पर विचार कर रही है। यह छात्र पर निर्भर करेगा कि वह विदेशी भाषा में सार्टिफिकेट कोर्स करता है अथवा डिप्लोमा व डिग्री हासिल करने को वरीयता देता है। अभी तक इसके लिए महज दस विदेशी भाषाओं का चयन किया गया है।

मानना है कि एक अतिरिक्त विदेशी भाषा के बाद पी-एच०डी०/डी० फिल० उपाधि धारकों के कैरियर की सम्भावनाएँ उज्ज्वल हो जाएँगी और उन्हें प्रतिष्ठित राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों में काम के अवसर प्राप्त हो सकेंगे। मानव संसाधन विकास मंत्रालय ने देश के पी-एच०डी०/ डी०फिल० पाठ्यक्रम, डॉक्टरेट करने वाले छात्रों और डॉक्टरेट के बाद नौकरी के छात्रों का अध्ययन करने के बाद पाया कि डॉक्टरेट का महत्व दिनों दिन घटता जा रहा है। इसके अलावा तमाम ऐसे लोग डिग्रियाँ प्राप्त कर लेते हैं, जिनकी उस विषय में विशेषता तो दूर सामान्य पैठ भी नहीं होती। वस्तुत: कई विश्वविद्यालय में डॉक्टरेट के नाम पर पूरा रैकेट काम करता है। जिनके माध्यम से कोई भी परास्नातक व्यक्ति डॉक्टरेट की उपाधि हासिल कर सकता है। इस प्रवृत्ति पर अंकुश लगाने और डॉक्टरेट की उपाधि को पहले जैसी गरिमा प्रदान करने के लिए ही मानव संसाधन विकास मंत्रालय ने अब पी-एच०डी०/डी० फिल के साथ एक विदेशी भाषा का पाठ्यक्रम पास करने की अनिवार्यता सुनिश्चित करने का फैसला किया है।

राष्ट्रीय पुस्तक प्रदर्शनी

सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी में 2 अगस्त 2002 से सप्ताहव्यापी पुस्तक प्रदर्शनी आयोजित हुई। प्रदर्शनी में आयोजित संगोष्ठियों में निम्नांकित विषयों पर चर्चा हुई—

1. भारतीय संस्कृति के विकास में पुस्तकों का योगदान
2. आधुनिक सन्दर्भ में पत्रकारिता एवं पुस्तकों का योगदान।
3. भारतीय चिंतन परम्परा में पुस्तकों का योगदान
4. वर्तमान परिप्रेक्ष्य में पुस्तकों की उपादेयता।

हिन्दी नाटक का मराठी अनुवाद

डॉ० नरेन्द्र मोहन के हिन्दी नाटक 'सींगधारी' का मराठी में 'नेत्पाला फुटलंच शिंग' से श्रीनाथ तिवारी ने अनुवाद किया जिसका लोकार्पण औरंगाबाद में डॉ० चन्द्रकांत धांड़े ने किया। लेखक ने इसे अपनी कृति का पुनर्जन्म कहा।

हिन्दी शब्दकोश में बढ़ेंगे पौने दो करोड़ शब्द

केन्द्रीय हिन्दी संस्थान में हिन्दी भाषा और उसकी बोलियों के नये-नये शब्दों को तराशा और सँवारा जा रहा है। आने वाले दिनों में 'हिन्दी कार्पोरा' में शब्दों की संख्या 30 लाख से बढ़कर दो करोड़ तक हो जायेगी। यानी हिन्दी भाषियों को बहुत से ऐसे शब्द बोलने और लिखने के लिए उपलब्ध हो जायेंगे, जिनकी जानकारी भी उन्हें नहीं है। यही नहीं हिन्दी भाषा की पहली प्रयोगशाला भी शीघ्र तैयार होने जा रही है। जहाँ न केवल शब्दों के सही उच्चारण तय होंगे बल्कि उन्हें सही ढंग से उच्चारित करने का सलीका भी सिखाया जायेगा। आगरा स्थित इस संस्थान के अधिकारी मानते हैं कि हिन्दी कार्पोरा को विस्तार देने का कार्य अभी तक सही व सार्थक ढंग से नहीं हुआ है। इसी बात को ध्यान में रखकर यह योजना बनायी गयी है कि आने वाले वर्षों में हिन्दी के बोले और लिखे जाने वाले शब्दों की वर्तमान कुल संख्या लगभग तीस लाख से बढ़ाकर दो करोड़ कर दी जाये। कोश के मामले में हिन्दी को समृद्ध करने के उद्देश्य से कोशीय संसाधन का विकास किया जा रहा है। इसके अन्तर्गत अंग्रेजी-हिन्दी कोश को आधार बनाकर एक 'ट्रांसफर लैक्सिकन' तैयार किया जायेगा, जिससे प्रकृत भाषा संसाधन विषयक कार्यों में सहायता मिलेगी। हिन्दी भाषा के क्षेत्र में पहली बार किसी प्रयोगशाला का निर्माण किया जा रहा है। संस्थान के आगरा स्थित परिसर में स्थापित हो रही इस अत्याधुनिक कम्प्यूट्राइज्ड भाषायी प्रयोगशाला में भाषायी ध्वनियों के उच्चारण, अनुश्रवण एवं अधिगम आदि के सुधार के लिए

असमाचार

पी-एच.डी. वाया बाटी-चोखा

पी-एच.डी. कर डॉक्टर बनने के चक्कर में शोधार्थियों को क्या-क्या पापड़ बेलने पड़ते हैं। यह किसी से छुपा नहीं है। विश्वविद्यालय के खुशामद पसन्द अध्यापकों के बच्चों को स्कूल छोड़ने से लेकर सब्जी लाने तक का कार्य करना पड़ता है। इतना ही नहीं अध्यापक अर्थात् गाइड के मित्रों की भी जी हूजुरी करनी पड़ती है। ऐसा ही एक वाकया एक विश्वविद्यालय के शोध छात्र को भी झेलना पड़ा। उसे थीसिस 'सबमिट' करने के बाद लगभग पचास से अधिक लोगों के लिए स्वादिष्ट बाटी चोखा का इन्तजाम करना पड़ा। लोग उंगलियाँ चाटते हुए चोखे की तारीफ करते रहे लेकिन बड़ी मेहनत से लिखी गई थीसिस पर जुबान से एक शब्द भी नहीं निकला।

—'हिन्दुस्तान' से

हो रही है शोध प्रबन्धों की हेराफेरी

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के केन्द्रीय ग्रन्थालय से आज कल शोध प्रबन्धों को फोटोस्टेट कराकर नियमित बाहर ले जाया जा रहा है देश के अन्य विश्वविद्यालयों में शोध प्रबन्धों के फोटोस्टेट पर प्रतिबन्ध है। सम्बन्धित विषय के शोधार्थी केवल शोध प्रबन्ध में वर्णित सम्पर्क ग्रन्थों का विवरण लेकर अपने शोध कार्यों से सम्बन्धित तथ्यों को लेकर अपने कार्यों को पूरा करते हैं। काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के केन्द्रीय ग्रन्थालय में एक व्यक्ति एक समय में किसी भी थीसिस का तीस पृष्ठ फोटोस्टेट कराकर बाहर ले जा सकता है। आजकल एक ही थीसिस का अलग-अलग कई नामों से आदेश कराकर थोड़े ही समय में पूरी की पूरी थीसिस बाहर कर ली जाती है। इन थीसिसों को थोड़ा बहुत रद्दो बदल करके बाइण्ड कराकर अन्य विश्वविद्यालयों में जमा करके पी-एच०डी० की उपाधि आसानी से प्राप्त की जा रही है। कई लोग उपाधि प्रदत्त थीसिसों को यथावत टाइप कराकर मात्र निदेशक और शोध छात्र का नाम बदल कर अन्य विश्वविद्यालयों में जमा करके भी उपाधि प्राप्त कर लेते हैं। पी-एच०डी० के शोध कार्यों और थीसिसों के सम्बन्ध में कोई केन्द्रीयकृत व्यवस्था न होने के कारण इस तरह की धोखाधड़ी को पकड़ना आसान नहीं है। काशी हिन्दू विश्वविद्यालय की भूगोल विभाग की एक ऐसी ही थीसिस पिछले दिनों पकड़ में आई है। वास्तव में उच्च न्यायालय द्वारा (नेट) के साथ ही पी-एच०डी० की उपाधि को भी प्रदेश डिग्री कालेजों और विश्वविद्यालय के प्रवक्ता के लिए योग्यता मान लेने के कारण इस धोखाधड़ी में भारी वृद्धि हो गई है। काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में उच्चस्तरीय शोध साधनों और सुविधाओं के कारण यहाँ भारी संख्या में शोध कार्य हुए हैं और उनकी थीसिसें केन्द्रीय ग्रन्थालय में संग्रहित हैं। लेकिन संरक्षण की शिथिलता के चलते पूर्व में हुए ये मूल्यवान शोधकार्य फर्जी लोगों के नाम चढ़ने का क्रम शुरू हो गया है।

—'हिन्दुस्तान' से

और अहिन्दी भाषियों व विदेशियों को हिन्दी शब्दों की ध्वनियों का ज्ञान कराने के लिए अत्याधुनिक ध्वनि यन्त्र लगाये जा रहे हैं।

राजेन्द्र यादव उवाच

''हिन्दी के पाठकों की तादाद घटने की बजाय लगातार बढ़ रही है। पाठक घटने की शिकायत करने वाले लेखक वास्तव में पाठक के लिए न लिखकर स्वान्त: सुखाय लिखते हैं और ऐसे में पाठक भी उन्हें नहीं पढ़ता क्योंकि वह अपने को उनके लेखन से जुड़ा हुआ महसूस नहीं करता।''

—राजेन्द्र यादव
राजकमल प्रकाशन द्वारा आयोजित
लेखक पाठक संवाद में

क्या यह सच नहीं है कि हिन्दी में अश्लील अनैतिक साहित्य और राजनीतिक भ्रष्टाचार, हिंसा, बलात्कार साहित्य के लेखकों के साहित्य के पाठकों की संख्या निरन्तर बढ़ रही है। ऐसे में राजेन्द्र यादव का यह दावा कि ''सत्ताधारी दलों की विचारधारा के पास गौरवशाली अतीत की गाथाएँ तो हैं, लेकिन भविष्य के नाम पर उनके पास केवल शून्य है, ऐसे में युवा पीढ़ी को सुन्दर भविष्य कैसे मिलेगा?''

युवा पीढ़ी के लिए सुन्दर भविष्य की कल्पना उनकी पुस्तक 'आदमी की निगाह में औरत' के आवरण में दिखाई देता है, अन्दर वह भविष्य साकार हो उठता है। यादवजी के लिए औरत लेखकों की उपभोक्ता सामग्री है जिसे भिन्न-भिन्न रूपों में परोसकर पाठकों को लुभाया जाता है।

देशवासियों को कलाम का सलाम

श्री राग में श्री त्यागराज स्वामीगल की सुन्दर पंक्तियाँ मेरे मन में गूँज रही हैं—**ऐन्दारो महानुभावलू अन्दरिकी वंदनमुलु** मैं सभी महान नेकदिल महानुभावों को प्रणाम करता हूँ।

भारतीय सभ्यता की विरासत **वसुधैव कुटुम्बकम्** की भावना पर आधारित है। भारत हमेशा से मित्रता के लिए तत्पर रहा है और उसने विश्व के साथ दोस्ती का हाथ बढ़ाया है।

2000 वर्ष पूर्व **तिरूक्कुरल** की वाणी है—**पिणि इन्मै सेल्वम्विल्लैबिन्वम् एमम् अणियेन्व नाटिट्कत्वैन्दु**

रोगमुक्त होना, समृद्धि बनना, अधिक उत्पादन करना, सौहार्दपूर्ण जीवन व्यतीत करना और सुरक्षा का मजबूत होना।

सर्वधर्म समभाव हमारे राष्ट्र की आधारशिला है, हमारी सभ्यता की सबसे बड़ी शक्ति है। मैं अपने देश की विभिन्न परम्पराओं वाले विभिन्न लोगों के मन में एकता स्थापित करने का प्रयास करूँगा।

काल करे सो आज कर, आज करे सो अब।

राष्ट्रपति ए०पी०जे० अब्दुल कलाम

पाठकों के पत्र

'हिन्दी के शोध ग्रन्थ : दशा और दिशा' शीर्षक आपकी टिप्पणी से मैं असहमत हूँ। हिन्दी में शोध ग्रन्थों का लेखन बिलकुल बन्द होने पर विश्वविद्यालयों के आचार्यों की अखिल भारतीय यात्राएँ बन्द हो जाने से यात्रा वृत्तान्त एवं संस्मरण साहित्य को बड़ी क्षति होगी।

डॉ० वाचस्पति, प्राध्यापक, हिन्दी विभाग
डॉ० राममनोहर लोहिया राजकीय महाविद्यालय
आँवला (बरेली)

❑ ❑ ❑

'भारतीय वाङ्मय' के अगस्त अंक के मुख पृष्ठ पर 'स्पीकर और लेफ्टिस्ट' तथा 'हिन्दी के शोध-ग्रन्थ : दशा और दिशा' दोनों ही चिन्तन और प्रौढ़ता के अक्षर-प्रतीक हैं। एक ओर यह विनोदप्रियता का साक्ष्य है, तो दूसरा सामयिक सारस्वत चिन्तन के प्रति गहन अभिनिवेश का परिचायक है।

लोग अपक्व प्रोफेसरी के लिए या अन्याय विश्वविद्यालयीय नाहक लाभ के लिए लिखित तत्त्वहीन और तथ्यरहित शोध-ग्रन्थों का प्रकाशन कराते हैं। विद्यावाचस्पति **डॉ० श्रीरंजन सूरिदेव**
पटना

❑ ❑ ❑

'हिन्दी शोध ग्रन्थों' के सम्बन्ध में आपका वक्तव्य अत्यन्त महत्त्वपूर्ण और शोधग्रन्थों की दुर्दशा को उजागर करने वाला है, वस्तुत: जब से विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने अच्छे वेतनमान उच्च शिक्षा के क्षेत्र में लागू किये तब से ऐसे कैरियरिस्ट लोग और मौज के लिए धनार्जन करने वालों ने उच्चशिक्षा में आकर्षण देखा—ये वे लोग हैं जिन्हें चपरासी, बाबू, प्रशासनिक अधिकारी और शिक्षक सब नौकरियाँ केवल धन कमाने का साधन है। कुछ पुराने प्राध्यापकों का अपने रिश्तेदारों के प्रति मोह भी अक्षम लोगों की नियुक्ति का कारण बना। एक स्वनाम धन्य का हाईस्कूल में कई वर्षों तक फेल होने वाला सुपुत्र दिल्ली विश्वविद्यालय के कालेज के प्राध्यापक हैं। यह सब चरित्र का संकट है। **डॉ० कृष्णचन्द्र गोस्वामी**
भरतपुर (राजस्थान)

❑ ❑ ❑

'भारतीय वाङ्मय' के अगस्त अंक में आपका सम्पादकीय पढ़ा। आज के हिन्दी साहित्य ही नहीं, वरन् किसी भी साहित्य के शोध की दशा और दिशा का आपने यथार्थ चित्रण तो किया ही है, इसमें पनपने वाली विकृतियों को भी उनके यथार्थ रूप में चित्रित किया है। परन्तु आपने शोध की जिस अपेक्षा को अपने सम्पादकीय में अभिव्यक्त किया है, क्या उस दिशा में कोई सार्थक प्रयास उन अध्यापकों की ओर से हो सकता है जो इन्हीं सब विधियों से तथाकथित डॉक्टर बनकर अध्यापक नियुक्त हो गए हैं? इस पर भी गम्भीरता से विचार करना चाहिए। आज तो अध्यापकों की भी यही दशा है कि पाधा के पढ़ाए पधोकड़े, पधोकड़े के पढ़ाए आलबाल। यह लिखने के पीछे मेरी मंशा सामान्य रूप में है, अपवाद स्वरूप भी कुछ अध्यापक हो सकते हैं और होंगे भी परन्तु जिस प्रकार के लोगों की बहुतायत होती है, सामान्य रूप में चर्चा भी उन्हीं की होती है। दुर्भाग्य यह भी है कि विश्वविद्यालय, आयोग तथा सरकार सभी अध्यापकों को ही अनुदान देना स्वीकार करते हैं, भले ही उसका पूर्ण दुरुपयोग क्यों न हो। यदि कोई व्यवस्था ऐसी बन सके जिसमें स्वतन्त्र रूप से कार्य करने वाले कुछ विद्वानों को भी अनुदान दिया जा सके अथवा कोई प्रकाशन समूह ही योजना को वित्तपोषित करे तो हिन्दी साहित्य कोश ही क्या नागेन्द्रनाथ वसु वाला हिन्दी विश्वकोश भी अद्यतम रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है।

डॉ० प्रदीपकुमार जैन
मुजफ्फरनगर

❑ ❑ ❑

अगस्त अंक मिला। प्रथम पृष्ठ पर आपका संस्मरण पढ़कर बहुत हँसी आई। बाबू गुलाब राय और पं० सूर्यनारायण व्यास के बारे में पढ़कर अच्छा लगा। इन दोनों विद्वानों को मैं बहुत पास से जानता था। मन करता है मैं भी लिखूँ। मगर किस किस पर लिखूँ? मैं अब सब ओर से ध्यान हटा कर अपने संस्मरणों वाली पुस्तक संशोधित करके प्रेस में देने का निश्चय कर लिया है। हाँ एक बात लिखना भूल गया कि हिन्दी के शोध ग्रन्थों को लेकर आपका सम्पादकीय बहुत महत्त्वपूर्ण है। मैं पिछले दस-पन्द्रह वर्षों से इस बात को अनुभव कर रहा हूँ। प्रोफेसर महोदय एक निश्चित राशि लेकर शोध-प्रबन्ध लिख देते हैं। बहुत वर्ष बीत गये दिल्ली कालेज के प्रिंसिपल ने कहा था कि आप शोध प्रबन्धों की अनिवार्यता को खत्म नहीं करा सकते। **विष्णु प्रभाकर**

पत्र-पत्रिकाएँ

नालंदा दर्पण (मासिक)
सम्पादक : डॉ० स्वर्ण किरण
सम्पर्क : सोहसराय, नालंदा

विषयवस्तु (त्रैमासिक)
सम्पादक : धमेन्द्र गुप्त
सम्पर्क : 274, राजधानी एन्क्लेव, दिल्ली-110034

रवीन्द्र ज्योति (मासिक)
सम्पादक : डॉ० केवलकृष्ण 'पाठक'
सम्पर्क : 527/17, आनन्द निवास, गीता कालोनी
जीन्द (हरियाणा)

हिन्दी प्रचारक पत्रिका (मासिक)
सम्पादक : विजय प्रकाश बेरी
सम्पर्क : सी० 21/30, पिशाचमोचन, वाराणसी

वाणी (मासिक)
सम्पादक : सौत्रि पार्थ
सम्पर्क : पीपुल्स बुक हाउस, पटना-4

पुस्तक समीक्षा

बोलने की कला

वाणी-शिक्षा का व्यावहारिक शास्त्र

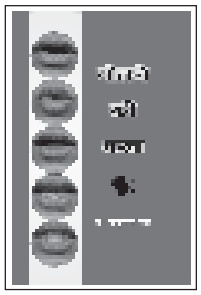

डॉ० भानुशंकर मेहता हिन्दी के उन सुप्रतिष्ठ हस्ताक्षरों में पाँक्तेय हैं, जो हिन्दी-साहित्य की सर्वतोमुखी समृद्धि के लिए सतत प्रयत्नशील हैं। डॉ० मेहता की प्रज्ञापूत लेखनी प्राय: हिन्दी के उन विषयों पर गतिशील होती है, जो अपेक्षित है या उपेक्षित है। इसके अतिरिक्त, वह चिकित्साशास्त्र और साहित्यशास्त्र के समप्रतिभ अधीती और अधिकारी भी हैं। इसलिए, उनके सर्जनात्मक साहित्य-चिन्तन में स्वभावत: वैज्ञानिक दृष्टि निहित होती है, जिसका आक्षरिक प्रमाण उनकी बहुसमादृत कृति 'बोलने की कला' है।

यों, वैदिक काल से ही बोलने की कला अथवा वाणी की व्यवहार-विधि पर भारतीय आर्ष परम्परा एवं विद्वत्परम्परा गम्भीर चिन्तन करती रही है। पाणिनी मुनि ने अपनी पाणिनीय शिक्षा में वाग्व्यवहार पर बहुत ही बारीकी से लिखा कि अगर बोलनेवाला स्वर और वर्ण से हीन शब्द का अपप्रयोग करता है, तो उसकी वाणी वज्र बनकर वक्ता का ही विनाश कर देती है। इसीलिए, उन्होंने उच्चारण में स्वर के अपराध से बचने की कड़ी चेतावनी दी है।

वाल्मीकि रामायण के सुन्दरकाण्ड में कथा है कि हनुमान् के वाक्चातुर्य से प्रसन्न होकर सीता ने उनको आर्य मानकर अशेष स्नेह और समादर दिया था। संस्कृत के नीतिकार जिस पंचवकार (विद्या, वपु, वाणी, वस्त्र और वैभव) को गौरव का कारण मानते हैं, उसमें वाणी भी सम्मिलित है। हिन्दी-नीतिकारों की यह उक्ति तो जनप्रसिद्ध है—'बातन हाथी पाइयाँ, बातन हाथी-पाँव।'

डॉ० मेहता की यह कृति वैसे वक्ताओं; अभिनेताओं, शिक्षकों और जनसामान्य के सदस्यों के लिए अनिवार्यत: अनुशीलनीय है, जो अपनी वाणीगत वैचारिकी को प्रभावकारी बनाना चाहते हैं। निश्चय ही, यह कृति ऐसे वाणीशास्त्र का प्रतिकल्प बन गया है, जिसकी द्वितीयता नहीं है।

प्रस्तुत कृति में, प्रामाणिकता और बहुव्यापकता के साथ पौरस्त्य और पाश्चात्य दृष्टि से वाणी-शिक्षा के वैज्ञानिक, यान्त्रिक और तकनीकी आयामों पर पुंखानुपुंख विचार किया गया है, जिसमें अनेक आधारभूत तकनीकी शास्त्रों, जैसे—शब्दशास्त्र, नाट्यशास्त्र, समाजशास्त्र, ध्वनिशास्त्र, भाषाविज्ञान, मनोविज्ञान, व्याकरण शास्त्र, चिकित्सा शास्त्र आदि से सम्बद्ध विषय सन्दर्भित हुए हैं। इससे लेखक की बहुश्रुतता एवं अध्ययन की गहनता संकेतित होती है। कहना न होगा कि जिन शैक्षिक संस्थानों में भाषिकी से सम्बद्ध शब्दशास्त्र और स्वरविज्ञान जैसे वैज्ञानिक विषयों, अथच भाषण-कला, अभिनय-कला, शिक्षण-कला आदि से सम्बद्ध पाठ्यक्रमों का अध्ययन-अध्यापन होता है, उनके लिए यह ग्रन्थ अतिशय उपादेय होगा। राष्ट्रभाषा हिन्दी के माध्यम से विज्ञान-विषय की पढ़ाई की सुविधा की दृष्टि से भी इस कृति का पार्यन्तिक महत्त्व है।

इस अपूर्व कृति की रचना के लिए डॉ० मेहता की ज्ञान-गुरुता, बौद्धिक विलक्षणता एवं शास्त्रीय विचक्षणता अभिनन्दनीय है, तो इसके प्रकाशन के लिए विषय की परख, सामयिक महत्त्व-बोध तथा शैक्षिक सूझ-बूझ की दृष्टि से सम्पन्न अनुभव प्रौढ़ प्रकाशक श्री पुरुषोत्तमदास मोदी और उनका विख्यात विश्वविद्यालय प्रकाशन समस्त हिन्दी-जगत के लिए अभिवन्दनीय है।

विद्यावाचस्पति **डॉ० श्रीरंजन सूरिदेव,** पटना

बोलने की कला
लेखक : डॉ० भानुशंकर मेहता
मूल्य : 250 रुपये

हिन्दी संतकाव्य : समाजशास्त्रीय अध्ययन पर एक दृष्टि

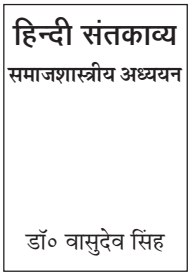

मैंने विद्वान् लेखक प्रो० वासुदेव सिंह की शोधपूर्ण पुस्तक 'हिन्दी सन्तकाव्य : समाजशास्त्रीय अध्ययन' का अवलोकन किया। हिन्दी साहित्य को वैभव सम्पन्न करने तथा उसके माध्यम से संसार को दिशा एवं आलोक प्रदान करने में संत कवियों की महत्ता स्वयं सिद्ध है। समाज और प्राणि मात्र के कल्याणार्थ उनकी परमार्थी दृष्टि ने अपने वर्तमान में जो भविष्यत् का अवलोकन किया उसे निर्भीक वाणी प्रदान की। कितने ही सम्प्रदाय और पंथ जन्मे। दर्शन के तमाम स्वरूप लोक विश्रुत हुये। यह भी सत्य है कि उनमें से अधिकांश की जन्मस्थली या कर्मस्थली वाराणसी रही है।

प्रो० वासुदेव सिंह ने कबीर को केन्द्र में रखकर उनके पूर्ववर्ती तथा पश्चात् के संत कवियों पर अत्यन्त परिश्रम और सूक्ष्म अन्वेषण करके इस पुस्तक की रचना की है। यह जहाँ संत कवियों की काव्यात्मक भाव-भूमि और रचनाधर्मिता पर प्रकाश डालती है वहीं उनके कथन के निहितार्थ को भी उजागर करती है। प्रो० वासुदेव सिंह ने न केवल संत कवियों के वास्तविक इतिहास को समाज के समक्ष रखा है वरन् उनके सामाजिक, सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक पक्ष की भी विवेचना की है। पुस्तक पाठक को विषय की गहराई में उतारती है और उसकी जिज्ञासा बढ़ाती हुई सम्पूर्ण पाठ के प्रति उत्सुक करती है। यह लेखक की विशेषता है कि उसने एक शुष्क विषय को सरल और प्रवाहपूर्ण बना दिया है। समाज से विरक्त होकर समाज में रहने वाला ही समाज की सही चिन्ता कर सकता है और सत्य का समर्थक हो सकता है, वही सन्त कहलाने का अधिकारी है।

मैं लेखक को इस कृति के लिए हार्दिक बधाई देता हूँ। मेरा विश्वास है कि प्रो० वासुदेव सिंह की रचनात्मकता अभी हिन्दी साहित्य जगत को बहुत-कुछ अर्पित करेगी। हिन्दी के जिज्ञासु पाठकों और शोधार्थियों को इस पुस्तक से बहुत लाभ होगा।

— केशरीनाथ त्रिपाठी
अध्यक्ष, विधान सभा, उत्तर प्रदेश

हिन्दी संत काव्य : समाजशास्त्रीय अध्ययन
लेखक : डॉ० वासुदेव सिंह
मूल्य : 380 रुपये

गागर में सागर

मेरे सतीर्थ अनुज डॉ० पृथ्वीकुमार द्वारा लिखित एवं विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी द्वारा प्रकाशित 'प्राचीन भारतीय कला एवं वास्तु' निस्सन्देह एक स्तरीय ग्रन्थ है। इसकी पृष्ठ संख्या 468 तथा छायाचित्रों की संख्या मात्र 65 है, किन्तु रेखांकनों की संख्या 1,115 है, जो साधारण कल्पना से कहीं अधिक है। ग्रन्थ का शीर्षक किंचित भ्रम उत्पन्न करता है, क्योंकि इसमें पूरे प्राचीन भारतीय इहिास का नहीं अपितु कुषाण काल तक की कला एवं वास्तु का विवेचन है। अवश्य ही लेखक ने अपने प्राक्कथन में यह स्पष्ट किया है कि उनके द्वारा लिखित इस पुस्तक का भाग-2 'गुप्तकालीन कला एवं वास्तु' शीर्षक से 1994 में ही प्रकाशित हो चुका है।

विचाराधीन ग्रन्थ में विषय का विवेचन उन्नीस अध्यायों में किया गया है। ठीक इसी विषय पर गुरूवर डॉ० वासुदेवशरण अग्रवाल द्वारा लिखित 'भारतीय कला' शीर्षक ग्रन्थ 1966 में प्रकाशित हो चुका है जिसका सम्पादन डॉ० पृथ्वीकुमार अग्रवाल ने ही किया है, किन्तु यह उल्लेखनीय है कि विचाराधीन ग्रन्थ पुरानी पुस्तक का पुनर्मुद्रण या परिवर्धित संस्करण नहीं है। एक तो 1966 के बाद पिछले 36 वर्षों में शोध एवं उत्खननों के माध्यम से कितनी ही नवीन सामग्री सामने आयी है, जिसका समुचित समावेश यहाँ किया

गया है। दूसरे विद्वान लेखक ने पुरानी सामग्री को भी अपनी दृष्टि से परखा है, जो उन्हें सतत अध्ययन के एवं अथक परिश्रम से मिली है। इस दिशा में उड़ीसा, गुड्डीमलम्, गंधार आदि की कला एवं वास्तु का विवेचन अवलोकनीय है। इसी क्रम में प्राचीन चित्र शैली की अन्तिम अध्याय में की गयी चर्चा रोचक है। कथनीय विषय के विस्तृत आयामों को देखते हुए केवल साढ़े-चार सौ पृष्ठों में, उसे बोझिल होने से बचाते हुए, समाविष्ट करना गागर में सागर भरने जेसा ही उपक्रम है जिसे लेखक ने सफलतापूर्वक सम्पन्न किया है। इसके लिए वे बधाई के पात्र हैं।

साथ ही उनके शिष्य डॉ० रवीन्द्रप्रताप सिंह भी बधाई के भागी हैं, जिन्होंने इस पुस्तक के लिए साठ प्रतिशत अर्थात् कोई 600 सुन्दर रेखांकन प्रस्तुत करके अपने शिष्य पद का समुचित निर्वाह किया है।

राष्ट्रभाषा में विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी ने इस सुन्दर ग्रन्थ का नयनरम्य प्रकाश से प्रकाशित करके अध्यापक एवं छात्रवृन्द के साथ हिन्दी जगत का भी बड़ा उपकार किया है।

— डॉ० नीलकण्ठ पुरुषोत्तम जोशी
पूर्व निदेशक, राज्य संग्रहालय
लखनऊ

एक शब्दकोशीय ग्रन्थ

यह पुस्तक लेखक के सुदीर्घ प्रयास का फल है जो उसे परम्परा से प्राप्त है। उसी के माध्यम से स्वयं के अनुभवों और वृहत्तर शोध पत्रों की यह अगली कड़ी है। इसमें आद्यंत ऐसे सूक्ष्म संकेत भी छिपे हैं जो आगामी कल के विचारों के बीज स्वरूप हैं और जो प्रत्यक्ष है, वह हमारे-आपके लिए एक शब्दकोशीय (अथवा संक्षिप्त विश्वकोशीय) उपयोग की सामग्री है।

इस ग्रन्थ में प्रारम्भिक काल से गुप्त-पूर्व काल की चित्र-मूर्तिकला, प्रतिमाशास्त्र, कला कौशल की सामग्री, यथा मनके, सिक्के, चकिए आदि का पूर्ण समावेश है। साथ-साथ तत्कालीन स्थापत्य का भी यह एक सन्दर्भ ग्रन्थ है। प्रत्येक विवरण शास्त्रीय स्तर का है और उच्चस्तरीय प्रामाणिक विद्यार्थी, अध्यापक, भविष्य के शोधार्थी के तत्काल उपयोग की सामग्री है जो इसे आकर ग्रन्थ के स्तर पर आसीन करता है।

प्रो० पृथ्वीकुमार का पूर्व प्रकाशित ग्रन्थ 'गुप्तकालीन कला एवं वास्तु' इसकी अगली कड़ी है।

इतनी विशाल सामग्री, तत्संदर्भित इतनी बड़ी संख्या में आकृतियाँ सर्वोपरि एक सम-वेदनायुक्त आलेखन, परम्परागत अन्वय-प्राप्त-शैली, लौकिक और शास्त्रीय शब्दों का जड़ाव, इस ग्रन्थ को और भी सुशोभित करते हैं। मेरे लिए तो यह एक गुप्त-धन प्रकट हुआ है। हिन्दी ही नहीं समस्त भारतीय भाषाओं के लिए यह एक आदर्श लेखन है। अब हम अंग्रेजी के याचक नहीं, दाता की स्थिति में हैं।

मैं लेखक और प्रकाशक दोनों को ही इस प्रकाशन पर बधाई देते हुए अपनी कृतज्ञता प्रकट करता हूँ एवं आशा करता हूँ कि इस शृंखला में लेखक अन्य ग्रन्थों द्वारा पूरे इतिहास क्रम को पूर्णता प्रदान करेंगे।

यह एक आदर्श ग्रन्थ है जिसके द्वारा तत्सम्बन्धी अभाव की पूर्ति हुई है।

— राय आनन्दकृष्ण
पूर्व डीन, कला संकाय एवं
अध्यक्ष, कला इतिहास विभाग
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय

प्राचीन भारतीय कला एवं वास्तु
लेखक : डॉ० पृथ्वीकुमार अग्रवाल
सजिल्द : 600.00 छात्र संस्करण : 450.00

भारतीय संग्रहालय एवं जनसम्पर्क

डॉ० आर० गणेशन्
भारत कला भवन
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय

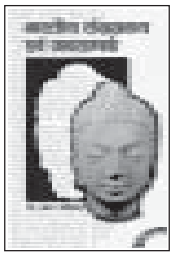

सजिल्द : 400 पेपरबैक : 250

विश्वभर में जनतन्त्र किसी भी प्रकार की व्यवस्था की रीढ़ की हड्डी की भाँति समादृत है, भले ही वह शासन-व्यवस्था हो अथवा संस्था-व्यवस्था। मात्र कुछ संगठनों जैसे सेना, नाभिकीय, अस्त्र-शस्त्र, न्यायपालिका को छोड़कर सभी प्रतिष्ठानों में जन सहयोग अपेक्षित है और जहाँ जन सहयोग की अपेक्षा है वहाँ जनसम्पर्क और जनता से जुड़ने की कला या दक्षता की भी आवश्यकता है।

संग्रहालय मूलत: जनता को अभिरुचिशील, जिज्ञासु, ज्ञान पिपासु, स्वस्थ मनोरंजन अभिलाषी बनाने की दृष्टि से स्थापित हुए और न्यूनाधिक यह अपेक्षा आज भी स्थिर है। अत: संग्रहालय व जनता का सम्बन्ध उतना ही अन्योनश्रित है जितना कि संग्रहालय एवं प्रदर्शों का। पश्चिमी देशों में संग्रहालय इतने लब्ध प्रतिष्ठ हैं कि जनता स्वयं उन तक बड़ी संख्या में पहुँचती है और कभी-कभी विविध माध्यमों से संग्रहालय भी उन तक पहुँचते हैं। यह परस्पर सम्बन्ध पर्याप्त दृढ़ीभूत हो चुका है।

भारत में दो शताब्दियों के लम्बे अन्तराल में भी संग्रहालय और जनता में वह घनिष्ठता स्थापित नहीं हो सकी। इसके कुछ अपवाद अवश्य हैं तथापि अभी तक संग्रहालय समाज में अपना उचित स्थान बनाने को संघर्षरत स्थिति में ही हैं। इसके अनेक कारण हो सकते हैं जैसे ग्राम्य अंचलों में शिक्षा का अभाव, संचार साधनों की कमी, प्राथमिकताओं का निर्धारण, जनसंख्या विस्फोट और नवयुवकों में उदासीनता एवं दिशाहीनता की अनुभूति, संग्रहालय कर्मियों की कार्यप्रणाली तथा शासन व वित्तीय संस्थानों में प्रोत्साहन की विपर्ययता। इन विषमताओं और अनेक चुनौतियों का सामना करने के लिए एक सशक्त साधन है जनसम्पर्क। भारतीय संग्रहालयों का पल्लवन व विकास अधिकतर सफल जनसम्पर्क की रणनीति पर निर्भर करते हैं।

उक्त परिप्रेक्ष्य में डॉ० आर० गणेशन् की पुस्तक 'भारतीय संग्रहालय एवं जनसम्पर्क' का प्रकाशन अत्यन्त समयोचित एवं उपयोगी है। इसके बारह अध्यायों में जनसम्पर्क, प्रचार-प्रसार, महत्त्व, आवश्यकता, माध्यम, विधाएँ, उपाय, क्रय-विक्रय (विपणन) आदि का विस्तृत एवं समीक्षात्मक प्रस्तुतीकरण हुआ है। इससे संग्रहालय, दर्शक, कर्मी, अध्येता एवं शोधकर्ता सभी लाभान्वित होंगे। रेखाचित्र, छायाचित्र, चार्ट आदि के माध्यम से जनसम्पर्क के उपायों एवं तकनीकों को प्रभावी रूप से आलोकित किया गया है। आशा है डॉ० गणेशन् का चिन्तन तथा परिश्रम सार्थक सिद्ध होगा। पुस्तक स्वयं ही संग्रहालयों के जनसम्पर्क उपकरण के रूप में ग्राह्य होगी।

लेखक तो सराहना के पात्र हैं ही विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी भी हार्दिक साधुवाद के भाजन हैं जिन्होंने अपेक्षाकृत नये विषय पर हिन्दी भाषी संग्रहालय शुभचिन्तकों को इतना महत्वपूर्ण ग्रन्थ उपलब्ध कराकर इस क्षेत्र की एक बड़ी रिक्ति की पूर्ति की।

— प्रो० रमेशचन्द्र शर्मा
पूर्व महानिदेशक तथा कुलपति
नेशनल म्यूजियम/इंस्टीट्यूट, नई दिल्ली
प्रोफेसर, भारतीय कला तथा संग्रहालय विज्ञान
पूर्व निदेशक, भारत कला भवन
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय

भोजपुरी साहित्य का समृद्ध पक्ष

पिछले कुछ दशक तक यह मान्यता प्रबल थी कि

भोजपुरी महज एक बोली है और इसका साहित्य मुख्यरूपेण वाचिक परम्परा में उपलब्ध साहित्य रहा है। इसमें दूसरी विधाओं (काव्य को छोड़कर) में लिखित साहित्य न के बराबर उपलब्ध है। इस मान्यता का खण्डन करते हुए 'पुरइन पात' शीर्षक से भोजपुरी साहित्य का चयन हमारे सामने इस भाषा की बिल्कुल भिन्न तस्वीर उपस्थित करता है। अरुणेश नीरन और चितरंजन मिश्र के सम्पादन में विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी से प्रकाशित इस कृति में कविता, ललित निबन्ध, व्याख्यान, नाटक, कहानी, यात्रा संस्मरण, रिपोर्ताज, व्यंग्य आदि विधाओं में लिखित उत्कृष्ट रचनाएँ शामिल हैं। वे साहित्यकार जो हिन्दी साहित्य में शीर्ष पद पर रहे हैं, भोजपुरी में अपनी रचनाधर्मिता की उपस्थिति के साथ एक जरूरी योगदान करते दिखाई देते हैं।

कविता खण्ड में गोरखनाथ, भरथरी, कबीर, धरमदास, पलटू साहब जैसे मध्ययुगीन संतों की रचनाएँ हैं तो आधुनिक युग के हीरा डोम से लेकर गोरख पाण्डेय तक की कविताएँ हैं। हीरा डोम की रचना 'अछूत की शिकायत' उस शोषक समाज को सम्बोधित है, जिससे अछूत का वर्ग विशेष शोषित होता है। उनकी स्थिति इन पंक्तियों से स्पष्ट होती है—

बभने के लेखे हम भिखिया न माँगन जा,
ठकुरे के लेखे नाहीं लउरी चलाइबि,

सहुआ के लेखे नाहीं अंड़ी हम मारब जा
अहिरा के लेखे नाहीं गंयिया चोराइब।

यानी ब्राह्मण, ठाकुर, बनिया और अहीर के कर्मों जैसे कर्मों से अछूत वंचित हैं। भीख भी ब्राह्मण को आसानी से मिलती है और अछूत को नहीं। जनकवि गोरख पाण्डेय की तीन कविताएँ सपना, मैना और जागरण शीर्षक से इस चयन में सम्मिलित हैं। ये सभी भोजपुरी रचनाएँ हिन्दी क्षेत्र के जनांदोलनों के बीच लोकप्रिय रही हैं। इसके अलावा मोती बी०ए०, राम जीआवनदास बावला, धरीक्षण मिश्र जैसे कवियों की रचनाएँ गावँ, लोकमन और आधुनिकता के मिश्रित संस्कार हमारे समक्ष उपस्थित करती हैं।

विद्यानिवास मिश्र का भोजपुरी ललित निबन्ध 'इमली के बीया' गाँव की स्थिति, उसके संस्कार और बदलती परिस्थितियों में बनते उसके नए संस्कार का चिट्ठा प्रस्तुत करता है। इसी तरह शिवप्रसाद सिंह और विश्वनाथप्रसाद तिवारी ने भी अपने निजी भावप्रवण प्रसंगों के साथ ललित निबन्ध लिखे हैं। शिवप्रसादजी ने 'आकाशदीप' जलाने की बनारस की प्रथा की प्राचीनता खोजी है और बताया है कि इस उत्सव का पुराना नाम 'कोजागरी' रहा। उन्होंने भोजपुरी लोकगीतों की विशेषताओं की ओर इशारा किया है और हमारे समक्ष अवसर गीतों की भीतरी रहस्यमयता के लौकिक पक्ष को खोला है।

व्याख्यान खण्ड में हजारीप्रसाद द्विवेदी और भगवतशरण उपाध्याय के भोजपुरी साहित्य सम्मेलनों में दिए गए व्याख्यान विशेष रूप से ध्यान आकर्षित करते हैं क्योंकि इनमें इस भाषा की विशेषताओं की ओर दोनों विद्वानों ने विशेष रूप से ध्यानाकर्षण किया है। द्विवेदीजी ने कबीर को भोजपुरी का आदिकवि बताया है। उन्होंने ग्रियर्सन के हवाले से बताया है कि भोजपुरी भाषियों की तरह भाषा-प्रेम अन्यत्र देखने को नहीं मिलता। उपाध्यायजी ने इस भाषा के वैयाकरणिक पक्ष पर विस्तार से बोला है। उन्होंने इस भाषा की खूबियों को किसी भी अन्तर्राष्ट्रीय स्तर की भाषा की खूबियों के मेल से जोड़ा है।

नाटक खण्ड में राहुल सांकृत्यायन का 'जोंक' और भिखारी ठाकुर का 'गबरघिचोर' नाटक प्रकाशित है। 'जोंक' नाटक में जोंक उन शोषकों का प्रतीक है, जो गरीब-मजलूमों का खून चूसते हैं। नोहर राउत नामक पात्र नाटक में कहता है कि जमींदार सबसे बड़ा जोंक होता है। पूरे नाटक में तीन पात्रों का संवाद है। जोंक की निष्ठुरता, मनुष्य रूपी जोंक के सामने कुछ नहीं होती है—यह तथ्य हमारे समक्ष प्रकाशित होता है। भिखारी ठाकुर का नाटक गीत प्रधान है और भोजपुरी क्षेत्र की लोकजन्य विशेषताओं की सभी खूबियाँ इसमें समाहित हैं। इसमें पाँच पात्र हैं और नाटक काफी प्रभावशाली है।

कहानी खण्ड में रामेश्वर सिंह कश्यप, विवकी राय, रामदेव शुक्ल और प्रकाश उदय की कहानियाँ विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। श्री कश्यप भोजपुरी क्षेत्र के मशहूर रेडियो नाटक 'लोहा सिंह' के मुख्य पात्र भी रह चुके हैं। प्रकाश उदय समकालीन भोजपुरी साहित्य के एक महत्त्वपूर्ण हस्ताक्षर हैं। विवेकी राय की कहानी 'रजाई' जोड़े से जूझते गाँव के गरीब पात्रों के नजरिए से 'रजाई' को देखने की कोशिश है। मिथिलेश्वर की कहानी 'तिरिआ जनम जनि दीहऽ विधाता' दहेज की समस्या को सामने लाती हुई संवेदना को जगाने वाली एक महत्त्वपूर्ण कहानी है।

यात्रा संस्मरण में चन्द्रभाल द्विवेदी ने अपनी अमरीकी यात्रा का देशी अंदाज में वर्णन किया है। इस लेख में अमरीका के प्रति एक भोजपुरी भाषी भारतीय की जिज्ञासाएँ भी हैं और एक तुलनात्मकता भी। यह अपने संस्कारों की सतर्कता और आधुनिकता की निष्ठुरता झेलते एक यायावर की अनुभव सम्बन्धी दुनिया है।

सम्पादकद्वय ने भोजपुरिया मन में पसरने की कल्पना को 'पुरइन पात' बताया है जो जल में, जल पर, जल से परे, जल पर थल रचते हुए, ऐसा थल दिखती है जिस पर जल की बूँदें आँसुओं की तरह ढुलक पड़ती हैं। इस छायावादी संचरण के बावजूद यह चयन हिन्दी के पाठकों के लिए शीर्ष हिन्दी रचनाकारों की लोकभाषा को जानने का एक बेहतर अवसर उपलब्ध कराता है। **— प्रदीप तिवारी**

पुरइन पात
सम्पादक
अरुणेश नीरन, चितरंजन मिश्र
मूल्य : 200.00

भारतीय वाङ्मय

मासिक

वर्ष : 3 **सितम्बर 2002** **अंक : 9**

प्रधान सम्पादक
पुरुषोत्तमदास मोदी

सम्पादक
परागकुमार मोदी

वार्षिक शुल्क
रु० 30.00

विश्वविद्यालय प्रकाशन
वाराणसी
के लिए
अनुरागकुमार मोदी
द्वारा प्रकाशित

वाराणसी एलेक्ट्रॉनिक कलर प्रिण्टर्स प्रा० लि०
वाराणसी
द्वारा मुद्रित

प्रेस रजिस्ट्रेशन एक्ट 1807 ई० धारा 5 के अन्तर्गत **रजिस्टर्ड नं० ए डी-174/2002**
Licenced to post without prepayment at
G.P.O. Varanasi
Licence No. LWP-VSI-01/2001

सेवा में,

प्रेषक : (If undelivered please return to :)

विश्वविद्यालय प्रकाशन
प्रमुख प्रकाशक एवं पुस्तक विक्रेता
(विविध विषयों की हिन्दी, संस्कृत तथा अंग्रेजी पुस्तकों का विशाल संग्रह)
विशालाक्षी भवन, पो०बाक्स 1149
चौक, वाराणसी-221 001 (उ०प्र०) (भारत)

VISHWAVIDYALAYA PRAKASHAN
Premier Publisher & Bookseller
(BOOKS IN HINDI, SANSKRIT & ENGLISH FOR STUDENTS, SCHOLARS, ACADEMICIANS & LIBRARIAN)
Vishalakshi Building, P.O. Box : 1149
Chowk, VARANASI-221 001(U.P.) (INDIA)

✆ : (0542) 353741, 353082 ● Fax : (0542) 353082 ● E-mail : vvp@vsnl.com ● vecppl@satyam.net.in